P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अथर्ववेदीय मन्त्रप्रतिपादित मणिसंधारण की वैज्ञानिकता : एक समीक्षा

पवन कुमार जोशी
शोधच्छात्र,
संस्कृत विभाग,
सम्राट पृथ्वीराज चौहान
राजकीय महाविद्यालय,
अजमेर, राजस्थान, भारत

आशुतोष पारीक
सहायक आचार्य,
संस्कृत विभाग,
सम्राट पृथ्वीराज चौहान
राजकीय महाविद्यालय,
अजमेर, राजस्थान, भारत

सारांश

अथर्ववेदीय मन्त्रों में मणि–मणिबन्धन एवं उनके धारण से लाभादि का विस्तृत विवरण है। मणि रक्षा कवच के रूप में, अनेक प्रकार की आपदाओं एवं भय से बचने के लिए धारण की जाती हैं। विद्यामार्त्तण्ड–स्वामी–ब्रह्ममुनि परिव्राजक चार प्रकार की मणियाँ मानते हैं– खनिज, सामुद्रिक, प्राणिज और वानस्पत्य। मणि धारण से तीन प्रयोजन सिद्ध होते हैं – 1. भूषा अलंकार 2. मन में प्रसन्नता, शान्ति और वीरता आदि का प्रभाव आना 3. रोगों का दूरीकरण तथा अनाक्रमण विशेषतः विष का प्रतिकार और अनाक्रमण होना। अथर्ववेद के मन्त्रों में मणियों से शक्ति, दीर्घायु, समृद्धि और आरोग्य की प्रार्थना की गई है। शत्रुओं पर विजय प्राप्ति, तेज, बल, आयुष और शतायु के लिए रोगों को नष्ट करने हेतु भी मणि बाँधी जाती है। मणि धारण से जरा–मृत्यु का निवारण होता है और कवच के तुल्य लाभ होता है। मणि धारण से धन–धान्य, पशु आदि का लाभ होता है। अथर्ववेद के मणिबन्धन से आधुनिक प्रचलित ताबीज, नक्श, गण्डा, डोरा, धागा आदि बातों को भी सिद्ध करते हैं। किन्तु इन बातों के लिए प्राचीन आर्ष ग्रन्थों में भी स्थान नहीं है फिर वेद में तो संभव ही नहीं है। मणि धारण से विष्कन्ध आदि रोग नष्ट होते हैं। अथर्ववेदीय मन्त्रों में मणियों के विभिन्न अच्छे–बुरे उद्देश्यों का भी वर्णन यहीं पर किया गया है। अथर्ववेद में स्पष्ट किया गया है कि सत्य की शक्ति सर्वोत्तम है।

मुख्य शब्द : मणि, मणिबन्धन, खनिज, सामुद्रिक, प्राणिज, वानस्पत्य, रसक्रिया गुटिका, आयुर्वैदिक, मनोवैज्ञानिक, विष मूषिका, कर्कोटक, गजमुक्ता, गरमणि, जादू–टोना, जंगिड, प्रतिसर, वरण, अस्तृत, दर्भ, औदुम्बर, शंख, शतवार, शतावर, अभीवर्त, पर्ण, फाल, वैयाघ्र, आंजन।

प्रस्तावना

मणिबन्धन का विषय अथर्ववेद में प्राप्त होता है। कण्ठ, मस्तक, सिर, नाभि और हाथ आदि अंगों में मणियाँ बाँधी जाती हैं। भावमिश्र ने लिखा है कि रत्न शब्द नपुंसकलिंग में है और उसका पर्याय मणि पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग में भी होता है, रत्न पाषाण की जाति है, मोती आदि भी रत्न ही कहे जाते हैं।[1] विद्यामार्त्तण्ड–स्वामी–ब्रह्ममुनि परिव्राजक चार प्रकार की मणियाँ मानते हैं– खनिज, सामुद्रिक, प्राणिज और वानस्पत्य।[2] हीरा, पन्ना, स्फटिक, सोना, चाँदी आदि खनिज मणियाँ हैं। मोती और मूंगा आदि सामुद्रिक मणियाँ हैं। हाथी के दाँत और गजमुक्ताः, व्याघ्रनख, कस्तूरी, मृगशृंग, सर्पमणि, मेढ़क का जहर मोहरा आदि जङ्गमज या प्राणिज मणि है और वनस्पतियों के मूल–कन्द–फल आदि पृथक्–पृथक् तथा उनकी रसक्रिया गुटिका एवं अनेक वनस्पतियों का बना एक योग गोली रूप में वानस्पत्य या औषधिज मणि है। स्वयं वेद में **''मणिर्वीरूधां''** ऐसा कहा गया है।[3]

मणिधारण और मणिधारण का प्रयोजन

वेद में मणि धारण का वर्णन प्राप्त होता है। ये मणियाँ भिन्न–भिन्न प्रकार के वृक्षों व वनस्पतियों की बनती हैं, इन्हें भुजा पर बाँधने या गले में डालने का भाव आता है। इन्हें गोलाकार बनाकर, मध्य में छिद्रकर सनवा दूसरे (सूत) धागे में पिरोकर, धारण करने का वर्णन मिलता है, वेद में जो मणियाँ है, इनके धारण से जो–जो लाभ होते हैं, उनका वर्णन इस प्रकरण में है।

इन मणियों के धारण से तीन प्रयोजन सिद्ध होते हैं :–

1. भूषा–अलंकार
2. मन में प्रसन्नता, शान्ति और वीरता आदि का प्रभाव आना।

रोगों का दूरीकरण तथा अनाक्रमण विशेषतः

3. विष का प्रतिकार ओर अनाक्रमण होना।

''सुश्रुत'' ने आयुर्वेदिक दृष्टि से गुणों का वर्णन करते हुए मणि धारण करना बतलाया है, किसी मनगढ़न्त गण्डा, ताबीज आदि अलौकिक जादू की बात नहीं कही। चरक[4] में कहा गया है कि हीरा, मरकत, पन्ना, सार (चन्दनादि) पिचुकी (इतर गन्धवती) विषमूषिका (विषमणि विषमुष्टिका–कुचला या द्रवन्ती) कर्कोटक मणि सर्प से, वैदूर्य (लहसुनिया), गजमुक्ता, गरमणि और जो उत्तर विषहर औषधियाँ हैं धारण करनी चाहिए। इस चरक वचन में प्राणिज खनिज मणियों तथा सार (चन्दन आदि) और ''वरौषध्यो विषापहाः'' उत्तम विषनाशक औषधियों को धारण करने के कथन से वानस्पत्य मणियों का भी उल्लेख हो जाता है। उपर्युक्त 'चरक' और 'सुश्रुत' के प्रमाणों से ज्ञात होता है कि खनिज, सामुद्रिक, प्राणिज और वानस्पत्य चार प्रकार की मणियाँ होती हैं जो कि विष हरणादि के लिए धारण की जाती हैं। खनिज, सामुद्रिक, प्राणिज और वानस्पत्य मणियों का ही अथर्ववेद में उक्त तीनों प्रयोजनों के लिये धारण करने का विधान है। यह वेद का विधान जादू–टोना या गण्डा–ताबीज नहीं है किन्तु आयुर्वेदिक या वैज्ञानिक सिद्धान्त का विषय है।

विविध मणियाँ और उनके लाभादि

जंगिड़–मणि

अथर्ववेद के तीन सूक्तों में जंगिड़ मणि का वर्णन है।[5] जंगिड़–मणि का दूसरा नाम अंगिरा भी है।[6] जंगिड़–मणि किस वृक्ष आदि से बनती है, इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं है। सायण ने अथर्ववेद की व्याख्या में कहा है कि जंगिड़ एक वृक्ष है।[7] यह वाराणसी में प्रसिद्ध है। यह कौनसा वृक्ष है? आजकल वाराणसी में भी अज्ञात है। जंगिड़ मणि के साथ शण या सन का भी उल्लेख है।[8] इनके विषय में उल्लेख है कि इनमें से एक जंगल से लाया जाता है और एक कृषि के रस से तैयार किया जाता है।[9] इससे ज्ञात होता है कि जंगिड़ वन से लाया जाता है और कोई औषधि है।

अथर्ववेद में जंगिड़–मणि के ये गुण बताए गए हैं– यह उग्रगन्ध वाली, तिक्त तथा कटु रस वाली, उष्णवीर्य, वमनकारक, भूख बढ़ाने वाली, कब्ज, अफारा और दर्द को दूर करने वाली, मल तथा मूत्र को शोधन करने वाली है। यह मिर्गी, कफ, उन्माद, भूतबाधा, कृमि या वायु को भी दूर करने वाली है।

जंगिड़ मणि को ताबीज की तरह बाँधा या पहना जाता है।[10] जंगिड़ मणि को दीर्घायु के लिए तथा सुख–शान्ति की वृद्धि के लिए पहना जाता है। जंगिड़ मणि के सहस्त्रों लाभ हैं। इसकी शक्तियाँ हजारों हैं। यह रक्षा करती है। जंगिड़ मणि में भी औषधि के गुण हैं। यह सभी रोगों को नष्ट करती है।[11] जंगिड़ मणि इन रोगों को दूर करती हैः– हड्डी आदि का टूटना, खाँसी, कमर–दर्द तथा कमर के अन्य रोग, ठण्ड से होने वाली सभी बीमारियाँ।[12] यह विष्कम्भ अर्थात् शोषक रोग या कन्धे के दर्द आदि को दूर करती है और कन्धे को बल प्रदान करती है। यह अधिक जम्भाई आना, सूखा रोग, क्षय रोग और शोक आदि रोगों को भी दूर करती है। यह भस्मक रोग को नष्ट करती हैं। जंगिड़ मणि सभी रोगों के कृमियों को नष्ट करती है। जंगिड़ मणि सभी प्रकार के कृत्या प्रयोगों और अभिचार प्रयोगों के प्रभाव को नष्ट करती है।[13] जंगिड़ मणि को धारण करने वाले पर शत्रु के किसी प्रकार के प्रयोग सफल नहीं होते हैं। यह शत्रुओं को नष्ट करती है। अथर्ववेद में जंगिड़ मणि के साथ सन का भी उल्लेख है और उसे रक्षक कहा गया है। इससे ज्ञात होता है कि सन का धागा हाथ में बाँधा जाता है।

प्रतिसर मणि

इस मणि को कश्यप ऋषि ने बनाया और इसका प्रचार किया। प्रतिसर मणि पहनने वाले पर अप्सरा, गन्धर्व और मनुष्यों का कोई भी कृत्य प्रयोग सफल नहीं हो सकता है। जो इस मणि को धारण करता है, वह सभी दिशाओं में शोभित होता है। प्रतिसर मणि वर्म अर्थात् कवच की तरह रक्षा करती है। जो इस मणि को धारण करता है, वह सिंह और व्याघ्र के तुल्य बलवान् होकर शत्रुओं का दमन करता है।[16] प्रतिसर मणि बहुत शक्तिशाली है। यह वीर को ही बाँधी जाती है। यह मंगलकारी और रक्षक है।[17] इस मणि से इन्द्र ने वृत्र को मारा और असुरों को हटाया। इससे ही वह द्यावापृथिवी आदि को जीतकर सर्व विजयी हुआ।[18] यह मणि कवच का काम देती है और सभी प्रकार के कृत्या–प्रयोगों को नष्ट करती है।[19]

वरण मणि

यह वरण मणि वरण वृक्ष की बनी हुई मणि है। यह सभी शत्रुओं और दुःखों को नष्ट करती है, अतः इसका नाम वारक होने से वरण पड़ा है।[20] यह वरण मणि सभी प्रकार के कृत्या–प्रयोगों से, मानवीय भयों से और सभी प्रकार के पापों से रक्षा करती है।[21] यह वरण मणि सभी रोगों को नष्ट करती है। इसमें सभी औषधियों के गुण है। वरण मणि यह शत्रुओं को नष्ट करने वाली है। यह बलवर्द्धक है। इस मणि के द्वारा ही देवों ने असुरों के दैनिक अत्याचारों को दूर किया। वरण मणि को इन रोगों की चिकित्सा माना गया है :– स्वप्नदोष, कुस्वप्न आना, नींद ठीक न आना, शारीरिक निर्बलता और हृदय की निर्बलता।[22] यह मणि सभी प्रकार के भयों को दूर करके अभय प्रदान करती है। यह पापों से बचाती है। मणि धारण करने वाले को यह दीर्घायु और पुरुषार्थी बनाती है। यह मणि राष्ट्रीय उन्नति और क्षत्रशक्ति की वृद्धि के लिए है। इस मणि को धारण करने वाला सभी प्रकार के यश से युक्त होता है।[23]

अस्तृत मणि

अथर्ववेद में वर्णन किया गया है कि यह मणि घी, दूध, शहद आदि से मिश्रित है। ''सायण'' ने अथर्ववेद की व्याख्या में कहा है कि इसको कोई दबा नहीं सकता है, इसलिए इसका नाम अस्तृत पड़ा अथवा त्रिवृत् मणि का ही नाम अस्तृत है।[24] इस अस्तृत मणि में सैकड़ों गुण हैं, सहस्रों शक्तियाँ और बल है। अस्तृत मणि से दीर्घायु, बल, वीर्य और तेज की प्राप्ति होती है। यह मणि सेना के साथ आक्रमण करने वाले शत्रुओं को भी निस्तेज कर देती है।

दर्भ मणि

अथर्ववेद के पाँच सूक्तों के 31 मन्त्रों में दर्भ मणि का वर्णन हुआ है। यह मणि विजय, बल, वर्षा, पशुलाभ और शत्रु–आक्रमण के समय लाभकारी है। दर्भ मणि के ये लाभ बताए गए हैं–दीर्घायु, तेज, और शत्रुनाशन । दर्भ

कुशा को कहते हैं। दर्भ का निर्वचन भी दिया गया है कि यह शत्रुओं को दम्भन अर्थात् नष्ट करती है, अतः दम्भन शब्द से दर्भ बना है।[25] मणि–बन्धन का अभिप्राय यह है कि उस वस्तु में जो गुण है, वह प्राप्त हों। दर्भ उग्र औषधि है। इसे दीर्घायु के लिए बाँधते हैं। दर्भ मणि को दीर्घायु और कल्याण के लिए बाँधा जाता है। दर्भ मणि पापनाशक है। दर्भ हृदय में शान्ति और पवित्रता का भाव देता है, अतः व्यक्ति पापों से बचता है। इसीलिए इसको ऋषि लोग धारण करते हैं। दर्भ मणि धारण करने वाले पर पाप का प्रभाव नहीं होता है। दर्भ मणि धारण करने वाला दुःखी नहीं होता और उसको आत्मिक क्लेश भी नहीं होता है। दर्भ मणि का यह भी लाभ बताया गया है कि इसको धारण करने वाला व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ,शूद्र और सभी लोगों का प्रिय हो जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि दर्भ मणि धारण करने वाला अपने क्रोध को वश में कर लेता है और अक्रोध के कारण वह सबका प्रिय हो जाता है।[26]

दर्भ मणि को विशेष रूप से शत्रुनाशक बताया गया है और कहा गया है कि शत्रु किसी भी रूप में आक्रमण करें तो उनको यह मणि छिन्न–भिन्न, एवं नष्ट–भ्रष्ट करती है। दर्भ मणि देवताओं का कवच है। यह इन्द्र का भी कवच है। यह राष्ट्रों की रक्षा करती है। इससे ज्ञात होता है कि दर्भ ज्ञान का प्रतीक है और ज्ञान देवों का कवच है। इस दर्भ मणि में हजारों गुण हैं।[27]

औदुम्बर मणि

यह मणि धन के इच्छुक के लिए है। यदि धन का नाश हो गया हो तो उस समय यह शान्ति देने के लिए है। औदुम्बर मणि उदुम्बर अर्थात् गूलर से बनती है।[28] यह वीरता का सूचक है, अतः वीर को ही बाँधी जाती है। औदुम्बर मणि का ब्रह्मा ने पुष्टि के लिए प्रयोग किया। यह पशु–समृद्धि के लिए भी है। यह मणि शत्रुनाशक है। धन, अन्न और पशुओं की समृद्धि करने वाली है। यह मणि प्रजा, धन और तेज की वृद्धि करती है। यह मणि धन की प्राप्ति और धन की पुष्टि के लिए धारण की जाती है।

शंख मणि

जल के भय से रक्षा के लिए यह मणि बाँधी जाती है। शंख मणि को सर्व रोग–नाशक कहा गया है।[29] शंख मणि आयुवर्धक है और दुःखों से पार करने वाली है। शंख मणि राक्षसों और कृमि रोगों को नष्ट करती है। शंख मणि रोग–नाशक, अज्ञान–नाशक और पाप–नाशक है। यह देवों एवं असुरों के सभी प्रकार के प्रहारों से रक्षा करती है। यह देवों की हड्डी है, वही मणि के रूप में हो गई है। यह दीर्घायु, तेज और बल देने वाली है। ''सुश्रुत संहिता'' में शंख के ये गुण बताए गए हैं– यह परिणाम में मधुर, वातनाशक, शीतल, स्निग्ध, पित्त के विकास में हितकारी, तेजोवर्धक और कफवर्धक होता है।[30] भावप्रकाश में शंख के ये गुण बताए हैं– यह नेत्रों के लिए हितकारी, शीतल, लघु, पित्त, कफ और रक्त–विकार को दूर करने वाला होता है। शंख यह एक समुद्री कोशस्थ जीव का अस्थिवत् रक्षक है। यह शंख के जीव के साथ बढ़ता है। यह हड्डी के तुल्य होता है। यह बात अथर्ववेद के मंत्र में अस्थि शब्द के द्वारा स्पष्ट होती है।

शतवार मणि

नक्षत्रकल्प में शतवारमणि को सन्तति लाभ के लिए और कुलक्षय के समय प्रयोग करने का विधान है।[31] सायण ने अथर्ववेद की व्याख्या में कहा है कि शतवार का अभिप्राय सौ बार अर्थात् मूल या काँटों वाली औषधि से है।[32]

शतवार मणि तेजस्वी है। यह विविध रोगों ओर दुर्णाम रोगों को नष्ट करती है। गुप्त बवासीर आदि रोगों को दुर्णाम रोग कहते हैं। शतवार मणि सभी प्रकार के दुर्णाम रोगों को नष्ट करती है। यह रोगों के कृमियों को भी नष्ट करती है। यह ऋषभ औषधि है। अतः नपुंसकता आदि रोगों को नष्ट करके पुत्रादि लाभ कराती है। उपर्युक्त कथन से ज्ञात होता है कि शतवार मणि गुप्त रोगों तथा अन्य बहुत से रोगों की चिकित्सा है। शतावर को भी वीर्यवर्धक, बवासीर, संग्रहणी आदि का नाशक बताया गया है। अतः शतवार से शतावर औषधि ली जा सकती है।

अभीवर्त मणि

कौशिक सूत्र में इस मणि को बनाने की विधि बताई गई है कि सुवर्ण को बीच में रखकर उस पर लोहा, सीसा, चाँदी और ताँबा मढ़कर त्रयोदशी से तीन दिन तक दही ओर मधु से पूर्ण पात्र में रखे। बाद में उसे धागे में पिरोकर कुशा पर रखकर उसके लिए यज्ञ करे और बाद में उसे बाँधे।[33] यह मणि शत्रु से तिरस्कृत राज्य की वृद्धि के लिए बाँधी जाती है। नक्षत्रकल्प में राज्य की कामना करने वाले राजा के लिए यह माहेन्द्री महाशान्ति कही गई है। इसके धारण से राष्ट्रीय शक्ति की वृद्धि होती है। अभीवर्त–मणि को धारण करने वाले का तेज सूर्य की तरह बढ़ता है। वह सभी शत्रुओं को नष्ट करने में समर्थ होता है।

पर्ण मणि

अथर्ववेद में सोमलता को मणि कहकर वर्णन है। उक्त सूक्त का देवता ''अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणिका'' में ''आ त्वा गन्''[34] ''आयमगन् इति द्वे सूक्ते, आद्यं सप्तकं, द्वितीयमष्टकं पूर्वमैन्द्रमुत्तरं सौभ्यम्।'' (अथर्ववेदीय वृहत्सर्वानुक्रमणिका) ''पर्ण–मणि'' दिया है। 'पर्ण' सोम का नाम है जैसे शतपथ ब्राह्मण में कहा है ''सोमो वै पर्णः।'' इसी सूक्त में पर्णमणि को चतुर्थ मन्त्र में सोम भी कहा है ''सोमस्य पर्णः सह उग्रमागन्।'' 'जंगिडरूपसोम' के प्रकरण में ''इन्द्रो वीर्यं ददौ।। उग्र इत्ते वनस्पत इन्द्र ओज्मानमा दधौ''। ''दीर्घायुत्वाय'' में सोमरूप जंगिड का इन्द्र के साथ सम्बन्ध तथा दीर्घायु के लिए उसका सेवन बतलाया है एवं यहाँ भी सोमरूप पर्णमणि का इन्द्र के साथ सम्बन्ध और दीर्घायु के लिए सेवन करना कहा है। ''सोमस्य पूर्णः सह उग्रमागन्निद्रेण दत्तो वरुणेन शिष्टः। तं प्रियासं बहुरोचमानो दीर्घायुत्वाय शतशारदाय।।''[35]

''सायण'' ने अथर्ववेद की व्याख्या में कहा है कि पलाश या ढाक का वृक्ष सोम के पत्ते से उत्पन्न हुआ है। अतः यहाँ पलाश वृक्ष अर्थ लेना चाहिए।

यह पर्ण मणि शक्तिशाली है। यह अपने बल से शत्रुओं को नष्ट करती है। इस मणि में देवों का तेज है और औषधियों का सत्त्व है। पर्णमणि शरीर रक्षक है। पर्णमणि ऐश्वर्य और क्षत्रशक्ति देती है। इसके द्वारा राजा

राष्ट्र में उत्तम होकर रहता है। पर्णमणि दीर्घायु और पुष्टि करने वाली है। इसके द्वारा मनुष्य दीर्घायु और शतायु होता है।

अथर्ववेद के मन्त्रों से ज्ञात होता है कि यह सोमलता के पत्ते के रस से बनने वाली औषधि है। अथर्ववेद में वर्णन है कि यह पर्णमणि सोमतला का उग्र बल है। अथर्ववेद में कहा गया है कि यह औषधियों का रस है। यह मणि वनस्पति से बनी है। इससे ज्ञात होता है कि पर्णमणि सोमलता के रस से बनने वाली मणि है। इसके धारण से राजा तेजस्वी और सर्वोत्तम होता है।

फाल–मणि

अथर्ववेद में 'फालमणि' का वर्णन है कि यह फाल मणि न तो आयुर्वैदिक दृष्टि से और न संग्राम की दृष्टि से कोई शरीर पर धारण करने वाली वस्तु है। किन्तु इससे भिन्न है। इस 'फाल' मणि को समझने के लिए कुछ ऐसे मन्त्र है। जिसमें ऐसी ही भिन्न मणि का वर्णन है।[36]

''देवा इमं मधुना संयुतं यवं सरस्वत्यामधि मणाव चर्कृषुः।
इन्द्र आसीत् सीरपतिः शतक्रतुः कीनाशा आसन् मरुतः
सुदानवः।।''

अथर्ववेद में इस फाल मणि के लाभों का वर्णन किया गया है।[37] यह शत्रुओं और दुर्भाव वाले व्यक्तियों को नष्ट करती है। यह कवच का काम देती है। तेज और रस प्रदान करती है। यह मणि सुवर्ण की माला के तुल्य है। यह श्रद्धा, यज्ञ और उत्सव की प्रतीक है। इस मणि को बृहस्पति ने तेज के लिए धारण किया था। भावप्रकाश में खदिर या खैर के ये गुण बताए गए हैं :– यह दाँतों के लिए हितकर, खुजली, खाँसी, अरुचि, मेद, कृमि, प्रमेह, ज्वर, व्रण, श्वेत कुष्ठ, आम, पित्त, रक्त विकार, पाण्डु तथा कफ को दूर करने वाला है।

वैयाघ्र मणि

अथर्ववेद में वैयाघ्र मणि का उल्लेख है।[38] यह मणि औषधियों के रस से बनती है। यह विनाश से बचाने वाली है। यह मणि व्याघ्र के तुल्य प्रभावशाली है। अतः इसे व्याघ्र मणि कहा है। यह सभी रोगों और सभी रोग कृमियों को नष्ट करती है।

खनिज मणि में आंजन मणि

अथर्ववेद में ''आंजन'' मणि का वर्णन है। अथर्ववेद में उस ' आंजन 'अंजन अर्थात् सुरमे की मणि अर्थात् गोली या टिकिया के पास रखने का नेत्र आदि रोगों के दूर करने के लिये विधान है। यहाँ इस ' आंजन ' अंजन मणि या सुरमे की गोली या टिकिया को बाँधने के लिये कहा है क्योंकि मन्त्र 5 में स्पष्ट ''यस्त्वा विभर्त्यांजन'' से यह बात स्पष्ट हो रही है क्योंकि उसे ''बध्राति'' शब्द से नहीं कहा गया है अपितु ''बिभर्ति'' धारण करता है–पास रखता है ऐसा कहा गया है। अतः सुरमे की गोली या टिकिया पास रखनी चाहिए, आवश्यकता के समय काम आने वाली वस्तु है, उस सुरमे की गोली या टिकिया को समय पर पानी में डुबो कर या घिसकर आँख में उसका जल टपकाना, नाक में डालना, मुख द्वारा पान करना, सर्प आदि के काटे स्थान पर उसे घिसकर लगाना आदि उपयोग लेना चाहिए ऐसा सूक्त का तात्पर्य हैं।[39]

आंजन मणि के और लाभादि के विषय में निम्न मन्त्र भी उल्लेखनीय है–

''एहि जीवं त्रायमाणं पर्वतस्यास्यक्षम्।
विश्वेभिर्देवैर्दत्तं परिधिर्जीवनाय कम्।।''[40]

अर्थात्, ''हे आंजन! तू जीव को रोग से बचाने के हेतु प्राप्त हो। निश्चय ही तू जीवन की परिधि प्राकार परकोटा है। समस्त देवों के द्वारा दिया हुआ–सम्पन्न किया हुआ पर्वत का नेत्र है।''

''परिपाणं पुरुषाणां परिपाणं गवामसि।
अश्वानामर्वता परिपाणायतस्थिषे।।''[41]

अर्थात्, ''हे अंजन! तू पुरुषों को स्वास्थ्य देकर रक्षा करने वाला है। गौवों को स्वास्थ्य देकर रक्षा करने वाला है। आशुगामी घोड़ो के स्वास्थ्यरक्षण के लिये स्थित है।''

आंजन सेवन से प्रसन्नता और उत्साह बढ़ता है और यह विष प्रभाव को नष्ट करता है। आंजन सेवन से मन विकसित होता है। उससे असम्यक् विचार, अनिद्रा वासना नष्ट होती है और हृदयरोग, नेत्ररोग भी नहीं सताता। आंजन का उपयोग गौओं–घोड़ों के लिए भी उपयोगी है।'' अंजन के प्रयोग से भयंकर ज्वर, कफरोग, सर्पविष दूर हो जाता है। वह अंजन तीन शिखरों वाले पर्वत से लेना चाहिये। आयुर्वैदिक निघण्टु में अंजन को विषनाशक कहा है। वेद के कथन से प्रतीत होता है। आंजन सर्पविष के लिए विशेष उपयोगी है। जो छोटे–छोटे कृमि आँख–कान–नाक–मुख में घुस कर यातना देते हैं उनको तथा उनके दूषित प्रभाव को अंजन प्रयोग नष्ट कर देता है।

निष्कर्ष

अथर्ववेदीय मन्त्रों में ''मणि'' नाम से कही हुई सब मणियों पर विचार करने पर प्रतीत होता है कि वेद का मणिबन्धन साम्प्रदायिक विषय या मिथ्या–कल्पित तान्त्रिक मन्त्र–तन्त्र–यन्त्र या नक्श, गण्डा, ताबीज अथवा जादू का विषय नहीं है अपितु वैज्ञानिक, आयुर्वैदिक, धनुर्विद्या, शस्त्रास्त्र–विद्या और कृषि विद्या से सम्बन्ध रखने वाला अति महत्त्वपूर्ण विषय है। अथर्ववेदीय मन्त्रों के आधार पर प्राप्त विवेचन इनकी वैज्ञानिक पुष्टि करते हैं तथा अन्धविश्वास से मुक्ति का मार्ग दिखाते हैं। मनोवैज्ञानिक और आयुर्वैदिक शास्त्र से अनुमोदित या सम्बन्धित मणिबन्धन का वेद में वर्णन होना अत्यावश्यक और निर्दोष है।

अन्त टिप्पणी

1. *रत्नं क्लीबे मणिः पुंसि स्त्रियामपि निगद्यते।*
   तत्तु पाषाणभेदोऽस्ति मुक्तादि च तदुच्यते ।। ''– (भाव प्र.–पृष्ठ 356)
2. *कौटिल्यार्थ शास्त्र प्रकरण–39*
3. *अथर्ववेदीय मन्त्र विद्या, पं. प्रियरत्न आर्ष– पृ. सं. 56*
4. *चरक । विष चिकित्सा – अ.– 23.248, 249*
5. *अथर्ववेद– 2.4,19.34, 19.35*
6. *अथर्ववेद– 19.34.6*
7. *अथर्ववेद– 2.4.1*
8. *अथर्ववेद– 2.4.5*
9. *अथर्ववेद– 2.4.5*
10. *अथर्ववेद– 2.4.1*

11. *अथर्ववेद– 2.4.3*
12. *अथर्ववेद– 19.34.10*
13. *अथर्ववेद– 19.34.2,4*
14. *अथर्ववेद– 2.4.5*
15. *अथर्ववेद– 8.5.13*
16. *अथर्ववेद– 8.5.12*
17. *अथर्ववेद– 8.5.1*
18. *अथर्ववेद– 8.5.3*
19. *अथर्ववेद– 8.5.2,7*
20. *अथर्ववेद– 10.3.5*
21. *अथर्ववेद– 10.3.4*
22. *अथर्ववेद– 10.3.6*
23. *अथर्ववेद– 10.3.18–24*
24. *अथर्ववेद– 19.46.1*
25. *अथर्ववेद– 19.28.1*
26. *अथर्ववेद– 19.32.8*
27. *अथर्ववेद– 19.30.2*
28. *अथर्ववेद– 19.31.14*
29. *अथर्ववेद– 4.10.3*
30. *सुश्रुत, सूत्र स्थान– अध्याय 46.110*
31. *नक्षत्रकल्प 17 और 19*
32. *अथर्ववेद– 19.36.1*
33. कौशिक *सूत्र 2.7*
34. *अथर्ववेदीया बृहत्सर्वानुक्रमणिका–3.4.1*
35. *अथर्ववेद– 3.5.4*
36. *अथर्ववेद– 6.30.1*
37. *अथर्ववेद– 10.6.1–35*
38. *अथर्ववेद– 8.7.14*
39. *द्र. अथर्ववेदीय मन्त्र विद्या, पं. प्रियरत्न आर्ष– पृ. सं. 61–62*
40. *अथर्ववेद– 4.9.1*
41. *अथर्ववेद–4.9.2*